उपसंहार

हबीब तनवीर हिंदी एवं भारतीय रंगकर्म के एक विशिष्ट रंग-व्यक्तित्व थे। वे पत्रकार, कवि, समीक्षक, अभिनेता, गीतकार, लेखक, निर्देशक सभी कुछ एक साथ थे। उनकी रंग चेतना ने छत्तीसगढ़ की लोक संस्कृति को विश्व रंगमंच के फलक तक पहुँचा दिया। रायपुर में जन्मे हबीब तनवीर का बचपन से कला एवं अभिनय की तरफ रुझान रहा। यही कारण है कि अपनी पढ़ाई बीच में छोड़ कर वे बम्बई चले आये। बम्बई का जीवन उनके व्यक्तित्व के निर्माण का पहला भाग था। अपने बम्बई प्रवास के दौरान उस जमाने में 'इप्टा' की चेतना ने हबीब तनवीर का ध्यान खींचा और वे इससे जुड़ते चले गये। 'इप्टा' के साथ काम करते हुए लोक की गतिशील ऊर्जा ने उन्हें गहरे तक प्रभावित किया था। इस प्रभाव ने ही बाद में हबीब को उनके मंचीय मुहावरे तक पहुँचाया।

यह सच है कि हबीब तनवीर के अधिकांश नाटक लिखित रूप में नहीं हैं। इसका मूल कारण उनका इम्प्रोवाईजेशन पद्धति द्वारा नाटक को तैयार करना था जिस कारण उन्होंने कभी भी अंतिम रूप से नाटक लिख कर उसे मंचन के लिए नहीं दिया। उनके कुछ नाटक स्वतंत्र रूप से बहुत बाद में छपे। उनके नाटक की प्रस्तुतियों के बीच में वह स्पेस, जिसे हबीब नाटकीय दृश्य-बिम्बों से भरते हैं, नाट्य-आलेख के छपे संस्करण में सामने नहीं आता है। इसलिए उनकी प्रस्तुतियां उनके निर्देशन के संदर्भ में तो चर्चित होती रहीं, लेकिन नाट्य लेखन के स्तर पर कोई गंभीर चिंतन नहीं किया गया।

देखा जाए तो हबीब तनवीर के नाट्य लेखन के कई रूप हमारे सामने हैं। पहला रूप बाल नाटक का है। दूसरा रूप मौलिक नाट्य लेखन का है। तीसरा रूप लोककथाओं, लोकशैलियों पर

आधारित नाटकों का है। चौथा रूप है- अनुदित या रूपांतरित। इसमें उन्होंने संस्कृत एवं पाश्चात्य नाटकों को नाट्य रूपांतरण कर प्रस्तुत किया है। इसके अतिरिक्त हबीब तनवीर ने कुछ कहानियों को भी नाटक का रूप दिया है जिसमें 'शतरंज के मोहरे', 'देख रहे हैं नैन' प्रमुख नाटक हैं।

हबीब तनवीर की रंग प्रक्रिया का एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण पक्ष यह रहा कि उन्होंने विफलताओं, विरोधों और कटु-आलोचनाओं की चौतरफ़ा मार सहते हुए भी अपनी रचनात्मक ज़िद कभी नहीं छोड़ी। उनकी कुछ प्रस्तुतियां बेशक सफल नहीं रही हो, इसके बावजूद उनकी सफल प्रस्तुतियों का मूल्यांकन समकालीन हिंदी रंगमंच की उन उपलब्धियों की ओर इंगित करता है, जो अंतर्राष्ट्रीय नाट्य-फलक पर पूर्व-स्थापित और सर्व-स्वीकृत नाट्य अवधारणाओं तथा मान्यताओं को कलात्मक चुनौती देने में समर्थ सिद्ध हुई हैं।

देखा जाए तो समकालीन हिंदी रंगमंच पर हबीब तनवीर अपनी दोहरी भूमिका निभाते हैं। एक नाटककार के रूप में, दूसरी रंग निर्देशक के रूप में। उनके नाटक कथ्य और शिल्प की दृष्टि से आधुनिक है, समसायिक हैं तो अपनी प्रस्तुति शैली और तकनीक में परम्परागत। उन्होंने न केवल छत्तीसगढ़ी 'नाचा' की शैली लो लिया, अपितु पंडवानी गायन, पंथी नृत्य, सुआ गीत, चन्दैनी, भारत लीला, स्वांग, प्रह्लाद नाटक जैसी लोकनाट्य शैलियों और विभिन्न प्रदेशों के आनुष्ठानिक प्रयोगों, लोक कथाओं आदि को भी शामिल किया। 'आगरा बाज़ार', 'मिट्टी की गाड़ी', 'गाँव का नाम ससुराल मोर नाम दामाद', 'अर्जुन का सारथी', 'राजा चंबा और चार भाई', 'चरनदास चोर', 'शाही लकड़हारा', 'जानी चोर', 'चंदैनी', 'जमादारिन', 'बहादुर क्लारिन', 'सोन सागर', 'हिरमा की अमर कहानी' आदि उनके ऐसे नाटक हैं जहाँ उनकी शैली की छाप देखी जा सकती है।

हबीब तनवीर मानते थे कि लोक रंगमंच और बोलियों का रंगमंच ही सबसे सशक्त है।

उनकी रंग चेतना आधुनिकता की उस सोच पर आधारित है जहाँ लोक परम्पराओं की सृजनात्मक क्षमताओं और ऊर्जा का स्वीकार्य है। वह परम्परा को बहुत अच्छे से जानते थे। उन्हें यह ज्ञात था कि परपरा का बहुत सारा हिस्सा मृत, अनुपयोगी और जीवन विरोधी भी है। उनके नाटकों में 'लोक' अपनी स्वाभाविकता में अभिव्यक्त हुआ है। अब चाहे वह उनका 'आगरा बाजार' हो या 'चरनदास चोर', 'हिरमा की अमर कहानी' हो या 'बहादुर कलारिन' सभी में लोक जीवन की अभिव्यक्ति मिलती है।

'चरनदास चोर' में तो नाटक को लोक जीवन से जोड़ने के सन्दर्भ में 'सतनामी धर्म' की मान्यताओं (सत्य ही ईश्वर है) का पालन हुआ है। 'आगरा बाजार' में नज़ीर की शायरी के माध्यम से लोकतत्त्व उभर कर सामने आते हैं। 'हिरमा की अमर कहानी' नाटक भी बेहद पिछड़े इलाकों के तथाकथित सरकारी विकास की विसंगतियों और आदिवासी जीवन के दुःख दर्द का प्रमाणिक दस्तावेज है। 'गाँव का नाम ससुराल मोर नांव दामाद' में भी छत्तीसगढ़ी लोक संस्कृति जैसे साकार हो उठी है। उनके नाटकों को पढ़ने और देखने के बाद यह धारणा बनती है कि उन्होंने स्थानिक को विश्वजनीन में रूपांतरित कर दिया है।

देखा जाए तो लोक और शहरी रंगशैलियों और तरीकों के तालमेल के जरिये समकालीन जीवन की व्याख्या करना उनके रंगकर्म का उद्देश्य रहा है। उनका रंगकर्म जीवन की पूर्णता का पर्याय है। यही बात उनके प्रदर्शनों को एक भारतीयता भी प्रदान करती है और विश्व स्तर पर भी पहुंचा देती है। इसके कलाकार जन्मजात अभिनेता हैं। वह सब मिलकर जो निर्मित करतें हैं वह कहानियों की अत्यंत समृद्ध विविधता है। इन कहानियों को वे अपनी भाषा और शैली में कहते हैं। यहाँ तक की ब्रेख्त और मौलियर को भी सहज रूप से प्रस्तुत करते हैं। यहाँ स्थानीय मूल और विदेशी शैली के बीच कोई अंतर नहीं रह जाता।

हबीब तनवीर के नाटकों में रंग संगीत भी एक शक्ति थी। वे करवा, ददरिया, विहाव आदि छत्तीसगढ़ी लोक धुनों का प्रयोग करते थे। आज के आपाधापी के दौर में हबीब तनवीर के संगीत में जो एक ठहराव, एक सुकून था, उससे दर्शकों को आत्मीय शांति और कुछ सीखने की प्रेरणा मिलती थी। उनके संगीत में दर्शक बंध जाते थे। हबीब तनवीर के 'चरनदास चोर', 'आगरा बाज़ार', 'बहादुर कलारिन', 'हिरमा की अमर कहानी', 'देख रहे हैं नैन', 'मिट्टी की गाड़ी' जैसे नाटकों में लोक संगीत की प्रभावशाली भूमिका आज इतिहास का एक तथ्य है।

हबीब तनवीर के नाटकों में रंगोपकरण का प्रयोग बहुत सहजता से, सादगी से और बड़ी सूझ-बूझ के साथ हुआ है। वेशभूषा में उन्होंने छत्तीसगढ़ी परिधान को महत्त्व दिया है। वे अपने नाटकों में लोकगीतों, धुनों, संगीत और नृत्य का ऐसा तालमेल रखते थे कि दर्शकों को अपनी मिट्टी से जुड़े होने का अहसास होता था। हबीब तनवीर के नाटक कथ्य और शिल्प की दृष्टि से बंधे-बंधाएं ढांचे से मुक्त हैं। वे अपने कथ्य को दोहराते नहीं हैं। उनका यह विचार था कि सत्ता के समर्थन में नहीं, बल्कि सत्ता के विरोध में ही सच्ची कला पनपती है, जिसका सीधा संबंध आम आदमी की तकलीफों, दुखों और उनकी विवशताओं से होता है। उनकी प्रस्तुतियों में हर बार कुछ ना कुछ नया होता है। वे एक तरफ अपने नाटकों में शास्त्रीय नाट्य रूढ़ियों का बहिष्कार करते हैं तो दूसरी तरफ तमाम नाट्य-वर्जनाओं को मंच पर दिखाया है।

हबीब तनवीर अपने नाटकों में भाषा की दृष्टि से भी बहुत प्रयोगधर्मी थे। उन्होंने अपने नाटकों में उर्दू, अरबी, फारसी, तुर्की, अंग्रेजी आदि के शब्दों का खूब प्रयोग किया। लेकिन अपने नाटकों में जिस बोली को उन्होंने सबसे ज्यादा प्राथमिकता दी वह है छत्तीसगढ़ी। उन्होंने इस बात का हमेशा ध्यान रखाकि उनकी शिक्षित नागर चेतना का लेखक, उनके ग्रामीण अभिनेताओं, कलाकारों पर हावी न पड़े। 'मिट्टी की गाड़ी', 'चरनदास चोर', 'गाँव का नांव सुसुराल मोर नाम

दामाद', 'हिरमा की अमर कहानी', 'बहादुर कलारिन', 'सड़क', 'जमादारिन', 'देख रहे हैं नैन' आदि की प्रस्तुतियों में छत्तीसगढ़ी बोली का भरपूर प्रयोग किया है।

हबीब तनवीर के नाटकों में चरित्र-चित्रण और गीत योजना का भी महत्त्व है। उनके नाटकों में गीत न केवल मनोरंजन करते हैं बल्कि कथ्य को भी आगे बढ़ाते हैं, चरित्र को उभारते हैं। हबीब ने लगभग अपने सभी नाटकों में गीतों का प्रयोग किया है। वे छत्तीसगढ़ की लोक रीतियों, अनुष्ठानों और परम्पराओं को भी अपनी रंगदृष्टि में पूरा स्थान देते हैं। वे कहते थे कि लोक में हो रहा है न। लोग कर रहे थे। वह लोक की जीवंत परम्परा है। उनके पास में लोक की चीजें सजावटी नहीं थी। वे सारे छत्तीसगढ़ को जीते थे। उसे समझते थे। उसकी एक-एक रीति को, उसके संगीत को, उसकी वेशभूषा को, उसकी भाषा को, उसकी कला को, उसके नृत्य को, उसकी गायन को, सब ले आये। एक जनपद जो है, उसको अपनी सम्पूर्णता में संसार के सामने रख दिया तनवीर ने।

हबीब तनवीर ने साबित किया है कि आधुनिक संवेदना से युक्त नए कथ्य को भी पारम्परिक रंग-शैलियों में पूरी क्षमता के साथ संप्रेषित किया जा सकता है। उनकी सामाजिक प्रतिबद्धता लोक शैलियों का सहारा लेकर अभिव्यक्त होती है। उन्होंने 'नाचा' के तत्त्वों और लोक कलाकारों के साथ एक नया रंग संश्लेष गढ़ा जो लोक और समय कालीन, ग्रामीण और आधुनिक, स्थानिक और वैश्विक सब एक साथ था। अतः इनके नाटकों का समग्र मूल्यांकन आवश्यक है क्योंकि ये अपनी शैली, तकनीक और प्रस्तुतिकरण की दृष्टि से देशज हैं, लेकिन कथात्मक रूप से विश्वजनीन, आधुनिक, सम-सामयिक।